- अध्याय षष्ठ -

- उपसंहार -

स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद हिन्दी का उपन्यास साहित्य तेजी से विकसित होता रहा। इस कालखंड की रचनाएँ अधिकाधिक प्रौढतम रूप में सामने प्रस्तुत होने लगी। कई लेखकों की दृष्टि और वैचारिकता में परिवर्तन होने लगा। सन् 1960 के बाद उपन्यासकारों में विषय और अभिव्यक्ति की दृष्टि से सजगता और प्रयोगशीलता लक्षित होने लगी। जनसामान्य की जीती-जागती ज्वलंत समस्याओं का और उनकी यथार्थ परिस्थितियों का चित्रण होने लगा। सामान्य जनता के जनजीवन की आशा-निराशा, हर्ष-खेद आदि को मुखर बनाने का प्रयत्न होने लगा। समाजव्यवस्था की विषमता के कारणों को नजरअंदाज किया जाने लगा। सामान्य जनमानस के जीवन में दिन-ब-दिन बढती जानेवाली जाटिलताओं का चित्रण प्रस्तुत किया जाने लगा। सन 1960 के बाद का प्रतिभावान प्रयोगवादी उपन्यासकार भारत की सामान्य जनता का चित्रण करने के लिए छोटे-छोटे गाँवों, पहाडी अँचलों, सागर अंचलों, नदी अंचालों और झुग्गी-झोपडपट्टी अंचलों की ओर मुडता रहा। सन 1960 के पश्चात आंचलिकता की यह धारा इसी कारण विविधमुखी रूप धारण कर सकी। हमने प्रस्तुत लघु-शोध-प्रबंध में झुग्गी-झोपडपट्टी अंचल में स्थित जनजीवन को तलाशने का प्रयत्न किया है। सन 1960 के पश्चात शिल्प की दृष्टि से हिन्दी उपन्यास साहित्य में विविध प्रयोग किये जाने लगे। प्रगतिवादी उपन्यास लेखकों द्वारा यथार्थवादी और अतियथार्थवादी उपन्यास साहित्य का सृजन होने लगा। प्रगतिवादी उपन्यासकारों ने नागरीय तथा महानगरीय वातावरण में स्थित पूँजीवादी शोषण का तथा पूँजीपतियों द्वारा समान्य जनता पर होनेवाले अन्यायों और अत्याचारों का यथार्थ चित्रण करना शुरू किया। ग्रामांचलों में जमीनदारों के शोषण एवं अत्याचार का चित्रण होने लगा। प्रेमचंद, रेणु, नागार्जुन, भैरवप्रसाद गुप्त, रामदरश मिश्र, हिमांशु श्रीवास्तव इस दिशा में अग्रणी रहे, जिन्होंने ग्रामांचल के शोषण पर प्रगतिवादी दृष्टिकोन के सहारे चिंतन किया।

इसी के साथ-साथ महानगरीय मजदूरों की गंदी और घिनौनी बस्तियों का और उनके दारिद्रय का तथा नारकीय जीवन का चित्र खिंचा जाने लगा। शैलेश मटियानी के 'कबूतरखाना' - 1960, 'किस्सा नर्मदाबेन गंगूबाई'- 1960, 'बोरीवली से बोरीबंदर तक' - 1969, जगदम्बाप्रसाद दीक्षित के 'मुरदाघर' - 1974, और भीष्म साहनी के 'बसंती' - 1980 में इस नारकीय मानवसृष्टि का जनजीवन चित्रित करके अपनी प्रगतिवादी दृष्टि का और प्रयोगशीलता का परिचय दिया हे। शैलेश मटियानी, जगदम्बाप्रसाद दीक्षित और भीष्म साहनी ने आलोच्य उपन्यासों में समाज

और व्यक्ति के जीवन का उद्घाटन करते समय शिल्प विषयक विविध प्रयोगों का आश्रय लिया है। सन 1960 के बाद का हिन्दी उपन्यास साहित्य अधिक सशक्त, कलात्मक, प्रौढ और प्रयोगशील बनता जा रहा है। इसका सबूत ये आलोच्य उपन्यास प्रस्तुत करते हैं।

साठोत्तरी कालखंड में मराठी उपन्यासों की प्रवृत्तियों में भी यथार्थवाद, अतियथार्थवाद, प्रगतिवाद के दर्शन होने लगे। नयी पीढी के मराठी उपन्यासकारों ने विषय तथा अभिव्यक्ति की दृष्टि से प्रयोगवादिता का परिचय पाठकों को करा दिया। इन मराठी लेखकों ने सामान्य जनता की जीती-जागती समस्याओं का चित्रण करके उनमें स्थित आशा-आकांक्षाओं को प्रस्तुत किया है। दलित साहित्य, ग्रामीण साहित्य, झोपडपट्टी आंचलिक साहित्य इस दिशा में विशेष योगदान निभाते हैं। सन् 1960 के पश्चात मराठी उपन्यास साहित्य में बम्बई में स्थित झुग्गी-झोपडपट्टी जनजीवन का चित्रण करने के लिए जयवंत दलवी ने सन् 1963 में 'चक्र' नामक उपन्यास लिखा, जो झोपडपट्टी जनजीवन पर आधारित मराठी का पहला उपन्यास माना जाता है। इसके बाद भाऊ पाध्ये ने 'वासूनाका' - 1965, मधु मंगेश कर्णिक ने 'माहीमची खाडी' - 1969, ल.ना. केरकर ने 'तो आणि त्याचा मुलगा' - 1980 आदि उपन्यास लिखकर बम्बई में स्थित विविध जगहों पर बसी झुग्गी-झोपडपट्टी जनजीवन का चित्रण किया है। इन प्रमुख उपन्यासों के सिवा 'चंदन', 'वावर', 'झोपडपट्टी', 'हातभट्टी', 'वस्ती वाढते आहे', 'दिवसाच्या अंधारात' आदि कई झोपडपट्टी जनजीवन पर प्रकाश डालनेवाले उपन्यास लिखे गये। इन सभी उपन्यासों में झोपडपट्टी जनजीवन का चित्रण यथार्थवादी और अतियथार्थवादी रूप में किया गया है।

हमने प्रस्तुत लघु-शोध-प्रबंध में केवल मराठी के चार प्रतिनिधिक महत्वपूर्ण रचनाओं का जिक्र करके यह सिध्द करने का प्रयत्न किया है कि इसी के अनुकरण पर हिन्दी में 'मुरदाघर' जैसा उपन्यास लिखा गया होगा जो हिन्दी का शायद पहला झुग्गी-झोपडी जनजीवन पर अधारित लिखा गया उपन्यास होगा।

जयवंत दलवी का 'चक्र' अत्यंत यथार्थवादी उपन्यास लगता है। बम्बई की झोपडियों में रहनेवाले दरिद्री वर्ग के नारकीय और पशुतुल्य जीवन जीनेवाले जनजीवन का यह अत्यंत यथार्थवादी चित्रण किया है। इसमें लेखक के प्रत्यक्ष अनुभव-विश्व की अनुभूति देखने को मिलती है। इस नारकीय जीवन का चित्रण करनेवाले हिन्दी और मराठी के सारे आलोच्य लेखक साहसी और हाड-माँस के साहित्यिक लगते हैं। इन उपन्यासों को पढने से यह स्पष्ट होता है कि ये सभी लेखक सभी वर्जनाओं से बाहर जाकर यथार्थवाद का निःसंकोच सामना करने का प्रयत्न कर रहे हैं।

हमने प्रस्तुत लघु-शोध-प्रबंध में 'कबूतरखाना', 'किस्सा नर्मदाबेन गंगूबाई', 'बोरीवली से बोरीबंदर तक', 'मुरदाघर' और 'बसंती' आदि उपन्यासों में झोपडपट्टी जनजीवन को तलाशने

का प्रयत्न करते हुए यह स्पष्ट कर दिया है कि इन उपन्यासों में जबरदस्त सर्जनात्मक प्रयोगशीलता है। इन आलोच्य लेखकों ने आधुनिक भीषण गंदे परिवेश में पले समाज के एक निम्नतम वर्ग वेश्या-वर्ग की हालत का बिभत्स, भयावह किन्तु यथार्थ वर्णन किया है। इन लेखकों ने परम्परागत साहित्यिक भाषा के समस्त मानदण्डों को झकझोर देकर नयी भाषाई सर्जना तथा बुनावट को उपन्यास में प्रारंभ से अंत तक तीव्र आवेग के साथ गतिशील दृष्टिकोन को अपनाकर वेश्याओं का चित्रण किया है। यह दृष्टिकोन सामंतवादी समाजरचना को स्थायी रखनेवाले रूढीवादी लेखकों का लगता है। वेश्या-वृत्ति नारी जीवन को पीडा देनेवाली समस्या है। आर्थिक आधार हीनता, विशिष्ट मनोवृत्ति इसके मूल में रहती है। इन सभी आलोच्य लेखकों ने समाज-स्वास्थ्य और प्रगतिशील राष्ट्र के लिए कलंक लगानेवाले इस समस्या की ओर गंभीरता के साथ सोचा है। इन उपन्यासकारों ने स्वच्छन्दी जीवन यापन करनेवाली 'कॉलगर्ल' का चित्रण नहीं किया है, बल्कि रोजी-रोटी के लिए परंपरागत देह-विक्रय करनेवाली नारियों की दु:खद गाथा को चित्रांकित किया है। वेश्यावृत्ति के चित्रण में इन लेखकों ने यथार्थवादी या मानवतावादी दृष्टिकोन को अपनाकर वेश्याओं की दयनीयता पर प्रकाश डालने का काम किया है।

आलोच्य उपन्यासों में चित्रित झोपडपट्टीयों में शराबी हैं, जुआरी हैं, गुण्डई करनेवाले दादा हैं, काला-बाजारी करनेवाले हैं, तस्कर हैं, पाकीट-मार हैं, अर्थात इन बस्तियों का जीवन अनारकी और गंदगी से ग्रस्त है।

हमने प्रस्तुत लघु-शोध-प्रबंध में बम्बई और दिल्ली की प्रतिनिधिक झोपडपट्टियों को नजरअंदाज करते हुए वहाँ की झोपडपट्टियों में स्थित जनजीवन को सूक्ष्मता के साथ चित्रित किया है।

इन लेखकों ने झोपडपट्टी जनजीवन के चित्रण में अनुभूति और संवेदना का परिचय दिया है। इन उपन्यासों में यथार्थ वर्णन करते समय लेखकों ने साहसी वृत्ति के दर्शन कराए हैं। वे हाड-माँस के कलाकार लगते हैं। इन्होंने झुग्गी बस्ती की एक नयी जमीन पर खडा रहकर वहाँ के जनजीवन को कुरेदने का काम किया है। इन झोपडपट्टी की वेश्याओं, वहाँ की गंदगी, वहाँ के अवैध धन्धें, वहाँ के अवैध यौन संबंध, वहाँ की गुनहगारी की प्रवृत्ति, वहाँ के नशापान में डुबी हुई दुनिया, वहाँ के लोगों पर हावी होनेवाले पुलिस के आतंक, पुलिसों द्वारा उनकी होनेवाली पीटाई, पति-पत्नी के बीच के तनाव, बच्चों की दयनीय स्थिति, वहाँ का दारिद्रय, वहाँ के जनमानस के बीच सँडरानेवाली उज्ज्वल भविष्य के सपने, कम श्रम में धन्नासेठ बनने की प्रवृत्ति, परिश्रम से छुटकारा पाने के लिए शराबपान और वेश्या-गमन, ग्राहकों की तलाश में लगी वेश्याएँ, ग्राहकों को

प्राप्त करने में वेश्याओं में लगी होड, आपसी संघर्ष, हवालात का बंद अंधेरा विश्व, वहाँ की असाध्य बिमारी, भुखमरी, मजबूरी आदि के रूप में आलोच्य उपन्यास लेखकों ने इन झुग्गी-बस्तियों के जनजीवन को प्रस्तुत किया है। इन लोगों की यातनाओं को भोगने की मजबूरी को इन लेखकों ने यथार्थता के साथ चित्रित किया हे और यह दिखाने का प्रयत्न किया है कि ये लोग मानवोचित सम्मान से कैसे दूर रहते है और मृत्यु के बाद भी उनकी हेटी समाजद्वारा कैसी होती है। इन लेखकों ने झुग्गी-झोपडपट्टी जनजीवन के पक्ष में रहकर उनके दुःखों के प्रति हमदर्दी दिखायी है और प्रस्थापित समाज की हेटी की है।

इन झुग्गी-झोपडियों में मिचली उत्पन्न करनेवाली मैना, बशीरन, मरियम, चंदा, रोजी, गंगूबाई, कुलसूम, सईदन, नागम्मा, पिचन्ना, शारदाकाकी आदि वारांगनाएँ दिन-रात काम करनेवाले कुली, मजदूर, किस्तैये, रंडी के पैसे मारनेवाले मनचले, जुआ खेलनेवाले, सडा-गला अन्न खानेवाले आवारा छोकरें, हिजडें, तडीपार किये गये दादा लोग, पुलिस के आतंक से आतंकित इन्सान हैं। इन उपन्यासों में रोजी, युसुफ दादा आदि मानवतावादी पात्र भी देखने को मिलते हैं जो इस गंदे किचड में कमल-पुष्प जैसे लगते हैं। इन झुग्गी-बस्तियों में कच्ची शराब बेचना, जुआ खेलना, चोरी-तस्करी करना, आदि अवैध धन्धें भी चलते हैं। 'मुरदाघर' का जब्बार और पोपट 'बोरीवली से बोरीबंदर तक' का युसुफ दादा इन अवैध धन्धों के अच्छे उदाहरण लगते हैं। इस बस्ती में जबरन औरतें लायी जाती है। कई औरतों को भगाकर लाया जात हे और उन्हें वेश्या व्यवसाय करने के लिए बाध्य किया जाता है। कभी-कभी परिवार के भरण-पोषण के लिए भी इन स्त्रियों को वेश्या-व्यवसाय करना पडता है। 'कबूतरखाना' की गंगा, पिचन्ना, नागम्मा, 'बोरीवली से बोरीबंदर तक' की नूर (रेवा), चंदा आदि औरतें इसी कोठी में आ जाती है। यहाँ अवैध मातृत्व का बोझ ढोनेवाली वेश्या-नारियाँ भी हैं, जिन्हें अपने नवजात शिशु के प्रति कोई प्रेम नहीं रहता है।

आलोच्य उपन्यासों में चित्रित स्त्री-पुरूष सम्बन्ध स्वार्थ की बुनियाद पर खडे हैं। मैना-पोपट, जब्बार-हसिना, गणपत-सईदन, गणपत-कुलसुम, रहीमा पठान-रामी, बाबूभाई-काली लडकी, नारायण घाडगे-सुभद्रा आदि के सम्बन्ध इसी कोटी में आ सकते है। 'मुरदाघर' का जब्बार मात्र अपनी पत्नी को वारांगना बनाने के विपक्ष में लगता है। इसलिए तडीपार होने के पश्चात भी वह चोरी-छिपे अपनी पत्नी की खबर लेने आता है।

प्रस्तुत लघु-शोध-प्रबंध में हमने झोपडपट्टी की संकल्पना, झोपडपट्टी एक जागतिक समस्या, भारत में स्थित झोपडपट्टियों की स्थिति और गति, बम्बई महानगर की झोपडपट्टियों की स्थिति और गति, महानगरीय जनजीवन की समस्याओं का झोपडपट्टी निर्मिती में योगदान, नागरीकरण के कारण नगर-महानगर-विशालनगर विकासयात्रा, नगरों का वर्गीकरण, मानवी जीवन और महानगरों का आकर्षण, धारावी झोपडपट्टी में परिवर्तन की हवा, चुनावी राजनीति और झुग्गी

झोपडियों का योगदान, बम्बई महानगर और झोपडपट्टी निर्मूलन अभियान, महानगरीय जनजीवन की समस्याएँ आदि का चित्रण करके यह दिखाने का प्रयत्न किया है कि झुग्गी-झोपडियों के कारण महानगरीय जनजीवन पर आज कैसे अस्त-व्यस्त बना हुआ है।

प्रस्तुत लघु-शोध-प्रबंध में हमने गंदगीपूर्ण परिवेश, विस्थापन, वेश्या-व्यवसाय, दारिद्रय, अवैध धन्धें, दाम्पत्य जीवन में तनाव, मानवता, उज्ज्वल भविष्यत के सपने, गाली-गलौज की प्रवृत्ति, असाध्य बिमारियाँ, पुलिस आतंक, आपसी ईर्षा-द्वेष, भविष्य के प्रति चिंतन, नशापान, जातीय भेदाभेद की प्रवृत्ति, वेश्यागमन की प्रवृत्ति, मनोरंजन की विविध प्रणालियाँ, दुर्दैव के शिकार लोग, स्नेहील प्रेम सम्बन्ध आदि पहलुओं के आधार पर झोपडपट्टी जनजीवन को तलाशने का प्रयत्न किया है और इस जनजीवन में बुराइयों का कितना साम्राज्य फैला हुआ है इसपर प्रकाश डाला है।

इस लघु-शोध-प्रबंध में हमने वेश्या समस्या, पुलिस शोषण की समस्या, अवैध धन्धों की समस्या, अवैध सन्तान की समस्या, नशापान की समस्या, असाध्य बिमारियों की समस्या, बेकारियों की समस्या, दरिद्रता तथा अभावग्रस्तता की समस्या, अवैध यौन सम्बन्धों की समस्या आदि का जिक्र प्रस्तुत करते हुए यह स्पष्ट कर दिया है कि झुग्गी-झोपडपट्टी जनजीवन समस्याओं को एक पीटारा ही लगता है। इन समस्याओं से छुटकारा पाने के लिए ये लोग गैर हरकतें करते हैं, पुलिसों के शिकंजे में अटकते हैं और कीडे-मकौडे के भाँति जीवन-यापन करते हैं।

इस लघु-शोध-प्रबंध में हमने 'कबूतरखाना', 'किस्सा नर्मदाबेन गंगूबाई', 'बोरीवली से बोरीबंदर तक', 'मुरदाघर', 'बस्ती' आदि उपन्यासों के आशय का जिक्र पेश करते हुए यह दिखाने का प्रयत्न किया है कि इन उपन्यासों में एक भी धारावाही कथा न होकर अनेक घटनाओं को एक धागे में पिरोकर उपन्यासों की कथावस्तु का निर्माण कराया गया है। कथावस्तु की दृष्टि से ये पाँचों भी उपन्यास नये औपन्यासिक शिल्प के सबूत पेश करते हैं।

हमने हिन्दी के झुग्गी-झोपडपट्टी जनजीवन पर आधारित उपन्यासों का जिक्र करते समय इस लघु-शोध-प्रबंध में मराठी के झोपडपट्टी जनजीवन पर आधारित मराठी के 'चक्र', 'वासूनाका', 'माहीमची खाडी', 'तो आणि त्याचा मुलगा' इन चार प्रमुख उपन्यासों में चित्रित झोपडपट्टी जनजीवन पर सोचकर यह सिध्द कर दिया है कि मराठी के उपन्यास लेखकों ने जिन पहलुओं का वर्णन प्रस्तुत किया है, इन्ही पहलुओं पर हिन्दी के उपन्यास लेखकों ने भी गहराई से चिंतन किया है। 'मुरदाघर' इस दिशा में एक प्रभावी रचना हो सकती है।

आज सरकारी सुधार योजनाओं के कारण महानगरीय झुग्गी-झोपडियों में विकास की हवा फैलने लगी है। एशिया खंड की सबसे बडी झोपडपट्टी धारावी में छोटे-मोटे उद्योग-व्यवसाय

फलने-फुलने लगे हैं। महानगर के बीचों बीच बसी इस बस्ती के घर-घर में आज लघु-उद्योग चल रहे है। आज धारावी ने अपना चेहरा बदलना शुरू कर दिया है। पिछले दस-बारह सालों से इस झुग्गी-बस्ती की युवा-पीढी की विचारों में परिवर्तन देखने को मिलता है। कई साल पहले गैरकानूनी कृत्यों में और अवैध धन्धों तथा तस्करी में मशहूर यह झुग्गी-झोपडपट्टी आज अपने उत्पादन कार्य में व्यस्त है। श्रमिक विद्यापीठ ने बारह वर्ष पूर्व यहाँ अपना कदम रखा। यह सेवाभावी संस्था अस्थायी शिबीर के रूप में यहाँ प्रविष्ट हुई। इस सेवाभावी संस्था का उद्देश्य था धारावी के कल को सँवारना और यहाँ के रहनेवालों को भारत का बेहतरीन नागरिक बनाना। इस विद्यापीठ ने यहाँ की युवापीढी को सकारात्मक दिशा दिखाने का प्रयत्न किया। यदि यहाँ के निवासियों के कार्य का मूल्य हो तो उन्हें खुशी मिल सकेगी। डर से वे मुक्त हो सकेंगे। अपने भविष्य को समझने की क्षमता उसमें आ जायेगी और उनकी जिंदगी में परिवर्तन जरूर होगा। इसी उद्देश्य को सामने रखकर यह सेवाभावी संस्था धारावी झोपडपट्टी के घर-घर पहुँची। इन दिनों भयक्रांत महिलाएँ और युवतियाँ घरों से बाहर निकलना नहीं चाहती। परंतु ऐसी भयभीत महिलाओं को इस श्रमिक विद्यापीठ सेवाभावी संस्थाने प्रोत्साहित किया। इन लोगों की आवश्यकताओं को नजरअंदाज करके वहाँ शैक्षिक, व्यावसायिक और सांस्कृतिक कार्यक्रम शुरू किये। इन लोगों का व्यक्तित्व विकास करने का प्रयत्न किया। धारावी की विकास गति में वहाँ के सामाजिक कार्यकर्ताओं ने भी प्रोत्साहन दिया। आज धारावी में चमडा कारखाने, तैय्यार कपडों, खिलौनों की इकाईयाँ, ब्यूटी-पार्लर, टर्नर-ड्रॉईंग और छपाई कारखानें देखने को मिलते हैं। वहाँ के लोगों को विशिष्ट ट्रेनिंग देकर इस सेवाभावी संस्था ने बहुत बडा योगदान निभाया है। इस श्रमिक विद्यापीठ सेवाभावी संस्थाने कमाठीपुरा की वेश्याओं को भी प्रशिक्षित करके उन्हें आत्मनिर्भर बनाया और उदरपूर्ति के लिए शरीर-विक्रय से उन्हें मुक्त कराने का काम किया। भारत सरकार ने इस सेवाभावी संस्था को वित्तिय सहाय्य भी दिया। लगता है कि इसी प्रकार की सेवाभावी संस्थाएँ अथवा व्यक्ति सभी झुग्गी-झोपडियों में कार्य करें तो 'मुरदाघर' नुमा झोपडपट्टियाँ पूर्ण रूप में बदल जायेगी। आज सरकार झोपडपट्टी निर्मूलन अभियान के माध्यम से झोपडपट्टी जनों को पक्के मकान दे रही हैं। ये झोपडपट्टीवासी लोग पक्के मकान में रहने पर भी उनकी प्रवृत्तियों में जल्द-ही-जल्द परिवर्तन होगा ही इसकी संभावना कम लगती है।

स्पष्ट है कि झोपडपट्टी सुधार कानून, सेवाभावी संस्था और सेवाभावी व्यक्ति के द्वारा भी झोपडपट्टी जनजीवन में परिवर्तन संभवनीय लगता है इसकी ओर भी आलोच्य उपन्यास लेखकों ने संकेत दिये हैं। ये सारे आलोच्य लेखक मार्क्सवादी विचारधारा के होने पर भी उन्होनें अपनी

रचनाओं में केवल मार्क्सवाद का ही प्रचलन नहीं किया है। उन्होंने प्रकृतिवाद को यथार्थवाद के साथ रखकर चर्चा की है। इन उपन्यासों में प्रकृतिवाद के संकेत भी मिलते हैं।

'मुरदाघर' की सुभद्रा और नारायण घाडगे के बीच के पत्र से, 'कबूतरखाना' के कानजी सेठ द्वारा अन्नास्वामी को लिखे पत्र से पत्रात्मक शैली के दर्शन होते हैं। इन उपन्यासों में आत्मकथनात्मक शैली के दर्शन हमें 'कबूतरखाना' के माध्यम से होते है। 'कबूतरखाना', 'किस्सा नर्मदाबेन गंगूबाई', 'बोरीवली से बोरीबंदर तक' और 'मुरदाघर' की भाषा बम्बइयाँ हिन्दी है। इसमें मराठी के शब्दों का प्रयोग करके भाषा को पात्रानुकूल बनाने में इन लेखकों ने कमाल की सतर्कता दिखाई है। इन मार्क्सवादी विचारों के लेखकों ने मार्क्सवादी विचारों का आक्रमण करके अतिमार्क्सवादी बनने का प्रयत्न किया है ऐसा लगता है।

प्रस्तुत लघु-शोध-प्रबंध के 'हिन्दी उपन्यासों में चित्रित झोपडपट्टी जनजीवन का चित्रण' में हमने झोपडपट्टी जनजीवन के विविध पहलुओं पर गहराई से सोचकर यह स्पष्ट कर दिया है कि निश्चित रूप में ये आलोच्य उपन्यास साठोत्तर कालखंड के उपन्यासों में अग्रणी बन सकते हैं।

0000